''रवीन्द्र नाथ टैगोर के साहित्य में अध्यात्मिक विमर्श''

डॉ० संदीप कुमार पाण्डेय*

रवीन्द्र नाथ टैगोर ने अपने कृतित्व में आध्यात्मिक मूल्यों का पुनर्स्थापन किया है कि पश्चिम के संशयवादी भौतिकवाद के स्थान पर पूर्व के आदर्शवाद रहस्यवाद के उन्नायक हैं। वे एकेश्वरवादी होते हुए भी सर्वेश्वावादी तथा अद्वैतवादी होते हुए भी द्वैत के परम उपासक थे। उनका धर्म दर्शन विपरीत मान्यताओं को अलौकिक गुच्छ था। वे आत्मा एवं परमात्मा की पृथक स्थिति को मानते हुए भी दोनों में सामंजस्य का प्रतिपादन कर रहे थे। ईश्वर का 'विश्वप्रज्ञानघन' स्वरूप मानव की आत्मीय सत्ता से पृथक नहीं था। वे 'नर-नारायण के रूप में मानवीय ईशवर की मान्यता के प्रतीक थे। नर और नारायण का सानिध्य एवं सहकार शाश्वत तत्व के रूप के संदर्भ में उनकी उभायता को माना। नारायण के परम पुरूषत्व अथवा उनकी पुरूषोत्तम स्थिति को पुरूष तथा प्रकृति के सामंजस्य का आधार माना। वे निर्गुण ईश्वर से सगुण परमात्मा की ओर प्रवृत्त हुए। प्रेम में परमात्मा की पूर्णता का दर्शन करते हुए वे उच्चतम आध्यात्मिक सत्त की अनुभूति करने लगे। वे मानव की नैतिक प्रकृति में विश्वास रखते थे। नैतिक आचरण के लिए ही मानव-जीवन का सृजन मनाते हुए पाप एवं अनैतिक आचरण के लिए नारायण द्वारा दंडित किये जाने का विधान, स्वीकार किया।[1]

रवीन्द की आध्यात्मिक प्रेरणा उपनिषदों, चैतन्य, कबीर आदि के प्रभाव में जागृत हुई थी। हिंदू-धर्म एवं संस्कृति को यूरोपीय दर्शन एवं सभ्यता से उच्च मानते थे। हिन्दू-व्यवस्था की संकीर्ण भावना से पूरे प्राचीन हिन्दू-धर्म, तत्व दर्शन ने एकेश्वरवाद एवं आस्तिकता का ऐसा सामाजिक आदर्श प्रस्तुत किया था जो ईसाइयत की समस्त उपलब्धियों से श्रेष्ठ था। रवीन्द्र ने यह प्रेरणा अपने गुरू राजनारायण बोस से प्राप्त की थी। वे भारत को विश्व सभ्यता का सूर्योदय देश मानते थे। उनके अनुसार मानव जीवन में ईश्वर की लीला की अनुभूति आवश्यक है। सर्वव्यापी ईश्वर का अभिज्ञान वैज्ञानिक भौतिकवाद एवं जड़ता से श्रेष्ठ है। विश्वात्मा के प्रेरणा-स्त्रोंतों के अनुसार जीवन जीना समस्त दुःखों एवं लिप्साओं से मुक्ति का मार्ग है।[2] वे इसे सृजनशीलता का ही परिणाम मानते थे। उन्हें विवेक एवं अनुभवजन्य ज्ञान की अपेक्षा आत्मानुभव एवं आत्मगत ईश्वरीय निष्ठा ने अधिक आकर्षित किया।

***एम. ए. पीएच.डी. सम्पादक 'संस्कृति विमर्श' शोध-पत्रिका**

रवीन्द्र ने मानव की आत्मा में अनंत एवं अविनाशी ईश्वर का वास माना है। परम सत्य की प्राप्ति के लिए परमात्मा का पुरूष के रूप में अवतरण तथा पुरूष का अनन्त के साथ विलीनकरण ही सबसे बड़ा सत्य है। मानव अपनी सृजनात्मक भाक्ति के द्वारा परमात्मा की अभिव्यक्ति कर ऐहिक जीवन की सार्थकता सिद्ध करता है। ईश्वर द्वारा रचित सृष्टि में मानव-गरिमा को विशिष्ट स्थान प्राप्त हुआ है। मानवता का सार्वभौमिक स्वरूप, जीवन में परम सत्य, कल्याण एवं सौन्दर्य की प्राप्ति द्वारा सर्वशक्तिमान परमात्मा के अस्तित्व का प्रतिपादन करता है। मनुष्य का स्थूल शरीर नाशवान है। किन्तु उसके सूक्ष्म शरीर की बहुलता जो कि मानवता में प्रस्फुटित होती है, शाश्वत है। मानवता द्वारा निर्मित आध्यात्मिक एकता एवं मानवमात्र की नैतिक समता ने रवीन्द्र को न केवल आध्यात्मिक मानववाद का संदेशावाहक अपितु अनुभवातीत मानवतावाद का चिन्तक बना दिया। उनका मानवतावाद सामाजिक एवं आर्थिक समानता के सिद्धान्त पर आधारित नहीं। वे भौतिक तत्व को जीवन के लिए उपयोगी मानते हुए भी उनकी अनिवार्यता को आध्यात्मिक चेतना का प्रतिगामी मानते है।[3] परमात्मा द्वारा दी गयी मनुष्य की अतिरिक्त भाक्ति जो कि उसे सृजनात्मक एंव सौन्दर्यबोध के प्रति अग्रसर करती है, मूल रूप से आध्यात्मिक है। सार्वभौम मानव-मन एवं सार्वभौम मन में निरन्तर संघर्ष स्थापित नहीं हो सकता। सार्वभौम मानव-मन तथा व्यक्तिगत मन के मध्य समन्वय ही सच्चा मानवःधर्म है।

रवीन्द्र ने मानव-व्यक्तित्व में विश्व का समावेश मानते हुए मानवता की सीमा-रेखाओं में परमात्मा के असीमित एवं अनन्त स्वरूप का दर्शन किया। उनकी ईश्वर के प्रति निष्ठा ने ईश्वर के साक्षात्कार के लिये बाध्य धार्मिक आडम्बरों के स्थान पर अपने अंतरा में स्थित नर-नारायण की उपासना का मार्ग चुना। ब्राह्य जगत एवें अन्तर्जगत में ईश्वर का अविराम अस्तित्व मनुष्य की आत्मिक उन्नति का प्रेरक अध्याय है। समाज तथा भाासन के अभिराम सौन्दर्य को हृदयंगम करना आवश्यक है। मायावाद के भ्रमजाल में न फंस कर भक्तिभाव से अनंत का सत्यान्वेशण अभीष्ट है।[4]

रवीन्द्र का आध्यात्मिक मानववाद ईश्वर साधना का एकाकी पथ नहीं है। वे व्यक्तिगत मोक्ष की कामना नहीं करते। मानवता का उनका दर्शन समष्टिरूप में मानव-कल्याण से अभिप्रेत है। वे सुख-दुख को चक्रवत मानते हुये जीवन की नैसर्गिकता को बनाये रखने में विश्वास करते हैं। सन्यास आध्यात्मिक साधना का मार्ग नहीं। शाारीरिक श्रम करने वाला मानव सहज भाव से अनंत का साक्षात्कार कर सकता है। कबीर, रैदास, रज्जब आदि को परमात्मा की असीम अनुकम्पा का बोध हुआ था। उन्हें इसके लिये गूढ़ दार्शनिक तत्वों का विधिवत् अध्ययन अथवा शास्त्रार्थ नहीं करना पड़ा था। धर्म, दर्शन, शास्त्र और विज्ञान की नीरस कल्पनाओं एवं तर्कों से ईश्वर की उपलब्धि नहीं होती। वास्तविक लक्ष्य कर्त्तव्य एवं विनय से ही प्राप्त हो सकता है।

मानवता का संश्लिष्ट स्वरूप संवेगात्मक तथा निर्णयात्मक है। उसे बोद्धात्मक नहीं माना जाना चाहिए। उनके अनुसार त्याग अथवा तपस्या के स्थान साहचर्य एवं सहकार से ही परम तत्व की प्राप्ति श्रेयस्कर है। नर-नारायण तथा दरिद्रनारायण का सहानुभूति मूलक विचार ही सत्य है। दरिद्रनारायण की सच्ची सेवा में मानवता पल्लवित होती है।[५] व्यक्तिगत स्वार्थ को तिलांजलि देकर दुख एवं क्षुधपीड़ित मानवता का परमार्थ अनंत की प्राप्ति का एक मात्र मार्ग है। मानव व्यक्तित्व की पूर्णता जब समाज के साथ एकात्म्य स्थापित कर ले और समाजगत एकात्म्य जब विश्वजनीय सार्वभौम का रूप ग्रहण कर ले तभी अनन्त के दर्शन होते है। आध्यात्मिक स्वतन्त्रता सर्वोच्च है। प्रेम समाजस्य एवं भाान्ति आध्यात्मिक मानवतावाद से अनुभवातीत मानवतावाद की ओर अग्रसर होने के सहायक तत्व है।[६]

रवीन्द्र नाथ ठाकुर का चिन्तन सार्वकालिक एंव शाश्वत मूल्यों का निरूपक है। वे समन्वय युग के ऐसे विचारक थे जिसने पाश्चात्य एवं प्राच्य के मानवीय मूल्यों को एकीकृत करने का स्वप्न देखा। उनका साहित्य सृजन अद्वितीय था। भारतीय परिवेश तथा पाश्चात्य प्रभाव के मिले जुले वातावरण में उनका सृजन-चिन्तन प्रस्फुटित हुआ। पाश्चात्य देशों की अनेक यात्राओं ने उसके मानस में भारतीय महानता को और भी अधिक उभार दिया। वे मानवता के गरिमामय आदर्श की खोज में भारतीय आध्यात्म के सफल अध्येयता थे। उनकी कृतियों में सार्वभौमिक मानववाद एवं विश्व-समाज की चेश्टा ने उन्हें 'विश्व-नागरिक' की श्रेणी में ला खड़ा किया। वे सामाजिक अन्याय एवं धार्मिक मतमतान्तर के आडम्बर से मानव की मुक्ति का प्रयास करते रहे। वे नैतिक आचरण की शुद्धता के प्रतीक थे। नैतिकता को धार्मिक धरातल से उठा कर मानवीय धरातल पर लाने का उनका प्रयास सराहनीय था। रवीन्द्र ने मानवता को ईश्वर के समकक्ष प्रस्तुत करके भारतीय संस्कृति की महानता का संदेश दिया। वे मानवता के अग्रदूत थे। भारत में विभिन्न सम्प्रदायों एवं विश्व की समस्त मानवता को समन्वय का पाठ पढ़ा कर रवीन्द्र ने प्रेम एंव सहानुभूति के शाश्वत तत्वों का प्रस्थापन किया।

साहित्य में भारत के एक मात्र 'नोबेल पुरूस्कार' विजेता का कीर्तिमान स्थापित कर रवीन्द्र ने समस्त विश्व का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया। उनकी साहित्यिक कृतियां परमात्मा की विराट सृजनात्मक भाक्ति का ही बोध नहीं कराती अपितु मानव के प्रकृति के साथ तादात्म्य का मार्ग भी प्रशस्त करती है। उनकी **गीतांजलि** विश्व-साहित्य को अनुपम देन है। गीतांजलि में रवीन्द्र का यह विश्वास मुखरित हुआ कि विश्व स्तर पर भारत की भूमिका अन्य देशों से भिन्न है। यह न केवल भारत के अपितु समस्त विश्व के हित में है कि भारत एकनिष्ठ होकर उस भूमिका का निर्वाह करें।

सन्दर्भ सूची

१. अलबर्ट श्वाइटर, इण्डियन वॉट इट्स डेवलपमेन्ट पृ०२४४

२. रवीन्द्रनाथ ठाकुर दी रिलीजन ऑफ मेन, पृ०३४

३. रवीन्द्रचन्द्र पाल, इण्डियन नेशनलिज्म, पृ० २४

४. बिपिनचन्द्र पाल, इण्डियन नेशनलिज्म पृ० २६०-२६१

५. दी रिलीज ऑफ मेन पृ० २३३-२३५

६. जी०डी० खानोलकर, दी ल्यूट दी एण्ड दी प्लोः ए लाइफ ऑफ रवीन्द्रनाथ टैगोर, (दी बुक सेन्टर प्रालि०, बम्बई १९६३ पृ० १५४)

******